भारत में भूस्वामित्व एवं जोताकार का कृषि विकास पर प्रभाव

Shodh Siddhi
A Multidisciplinary & Multilingual Double Blind Peer Reviewed International Research Journal
Volume: 02 | Issue: 01 [January to March : 2026], pp. 32-39

दीपिका स्वर्णकार
सहायक प्रोफेसर (भूगोल)
राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अंबिकापुर (छत्तीसगढ़)

डॉ. अनिल कुमार सिन्हा
प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (भूगोल विभाग)
राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अंबिकापुर (छत्तीसगढ़)

Abstract

भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। देश की बड़ी आबादी अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। कृषि उत्पादन को प्रभावित करने वाले अनेक कारकों में भूमि स्वामित्व की संरचना तथा जोत का आकार अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। भारत में ऐतिहासिक, सामाजिक एवं आर्थिक कारणों से भूमि का वितरण असमान रहा है तथा समय के साथ जोतों का विखंडन बढ़ता गया है। इसके परिणामस्वरूप छोटे एवं सीमांत किसानों की संख्या में वृद्धि हुई है, जिससे कृषि उत्पादन, निवेश, तकनीकी उपयोग तथा उत्पादकता प्रभावित होती है। खेतों का आकार और जोत-विखण्डन क्रिया भी कृषीय व फसल-प्रारूपों और प्रति इकाई उपज मात्रा को उतना ही प्रभावित करते हैं जितना कि भू-स्वामित्व और भूमि-धारण व्यवस्था। घनी आबादी वाले विकासशील देशों में खेतों की जोत का आकार प्रायः बहुत छोटा होता है। किसान द्वारा उठाए गए जोखिम की मात्रा खेतों व जोत के आकार पर निर्भर है। फार्म का आकार जितना अधिक बड़ा होता है काश्तकार की जोखिम वहन करने की क्षमता भी उतनी ही अधिक होती है। खेतों में यदि जोत का आकार छोटा है, काष्तकार उसमें फसल उत्पादन के सीमित साधन-सामग्री काम में लेता है और जोखिम भी कम वहन करता है। जोत आकार का सीधा संबंध प्रयोग में लायी कृषि तकनीक उपकरणों और कृषि-विशिष्टकरण (Specialization) से है। आकार के अनुसार ही काश्तकार अपने खेतों में प्रयोग करने के उपकरण सामग्री जैसे ट्रेक्टर, हारवेस्ट थ्रेसर आदि का चयन करता है। यही नहीं कृषि का विस्तार और फसलों का विषेष चयन, विषिष्ट श्रम मात्रा आदि महत्वपूर्ण निर्णय जोत के आकार पर निर्भर है।

Keywords: भू-स्वामित्व, जोत आकार, कृषि विकास, जोत विखंडन, कृषि उत्पादकता, सीमांत एवं लघु किसान, भूमि वितरण, भारत.

अध्ययन के उद्देश्य- इस शोध आलेख के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. भारत में भू-स्वामित्व की संरचना का अध्ययन करना।
2. भारत में जोत आकारों की प्रवृत्ति का विश्लेषण करना।
3.कृषि विकास पर जोत आकारों के प्रभाव का अध्ययन करना।
4.कृषि विकास के लिए आवश्यक नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध पद्धति (Research Methodology)-

यह अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक आंकड़ों (Secondary Data) पर आधारित है। इसके लिए कृषि गणना रिपोर्ट, सरकारी आर्थिक सर्वेक्षण, विभिन्न शोध पत्र एवं पुस्तकें, कृषि मंत्रालय के प्रकाशन, शोध जर्नल एवं रिपोर्ट

भू-स्वामित्व एवं जोत आकार की अवधारणा

भूस्वामित्व-

किसी व्यक्ति का भूस्वामी अथवा पट्टेदार के रूप में जितनी भूमि पर अधिकार अथवा स्वामित्व है, उसे भूस्वामी की जोत कहा जाता है। दूसरे शब्दों में—जिस भूमि की जुताई किसान करता है वह कृषक जोत कहलाती है। किसी भी स्थान पर

यदि जोत शब्द का प्रयोग किया जाता है, उसका मतलब किसान की जोत के बराबर भी हो सकती है, उससे बड़ी या छोटी भी हो सकती है।

सरकारी दृष्टिकोण से भूमि स्वामित्व को निर्धारित करना आवश्यक हो जाता है, क्योंकि सरकार उन्हीं लोगों से लगान वसूल करती है, जो उसका स्वामी होता है। भूमि व्यवस्था का भूमि के उत्पादन पर सीधा असर पड़ता है। उदाहरणार्थ, एक भूमि का स्वामी एक आसामी की अपेक्षा अधिक उत्साह से कार्य करता है तथा स्थायी भूमि सुधार के कार्यों में पूँजी लगाने को इच्छुक होता है। इससे किसानों के रहन-सहन के स्तर पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

आज भी कृषि के विद्यमान स्वरूप में सुधार लाने की आवश्यकता है। इन सुधार कार्यों में सबसे महत्वपूर्ण है भूमि की उचित व्यवस्था करना व भू-जोत के स्वरूप को सही रूप में निर्धारित करना। भूमि व्यवस्था से तात्पर्य एक ऐसी व्यवस्था से है जो भूमि के सम्बन्ध में काश्तकारों के अधिकारों और उत्तरदायित्वों की विस्तृत विवेचना करती है तथा यह बताती है कि कौन-कौन से व्यक्ति मिलकर या अलग-अलग मालगुजारी देने के लिए उत्तरदायी होंगे, उनका भूमि से क्या सम्बन्ध व हित होगा, इनके कौन-कौन से अधिकार होंगे एवं सरकार व उनका क्या आपसी सम्बन्ध होगा।

कृषि के क्षेत्र में उत्पादकता मुख्यतः दो प्रकार के कारकों पर निर्भर करती है, जिसे निम्न प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है—

(1) तकनीकी कारक – इस कारक में उन्नत बीज, उर्वरक, उन्नत हल, ट्रैक्टर, सिंचाई आदि कृषि आदानों एवं विधियों का समावेश होता है, जिनका उपयोग करने से कृषि उपज में आशातीत वृद्धि की जा सकती है।

(2) संस्थागत कारक – इस कारक में खेतों के आकार में सुधार, भूमि की सुरक्षा की व्यवस्था, लगान का नियमन आदि कारक जो कृषकों के लिए लाभप्रद हों, शामिल हैं। कृषि के प्रभावी विकास में संस्थागत सुधारों का उल्लेखनीय योगदान रहता है।

स्वतंत्रतापूर्व हमारे देश में तीन प्रकार की भूमि व्यवस्थाएं प्रचलित थीं—

(i) रैयतवारी व्यवस्था –

इस व्यवस्था को सन् 1872 में थॉमस मुनरो ने चेन्नई में लागू किया था। इसके बाद यह व्यवस्था धीरे-धीरे मुंबई, बरार, मध्यप्रदेश, असम तथा दुर्ग में प्रचलित हो गई। इस व्यवस्था में कृषक का स्वामित्व भूमि पर तब तक बना रहता था जब तक वह सरकार को लगान देता रहता था। कृषक अपनी भूमि को किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरित कर सकता था तथा आसानी से उसे बेदखल कर सकता था, क्योंकि भूमि प्राप्त करने वाले व्यक्ति का भूमि पर कोई कानूनी अधिकार नहीं होता था।

(ii) महालवारी प्रथा –

इस प्रथा का उदय सन् 1833 में आगरा में हुआ था। इस प्रथा के अन्तर्गत भूमि व्यवस्था में अधिकार एवं उत्तरदायित्व व्यक्तिगत न होकर सामूहिक होते थे। इस मालगुजारी का बंदोबस्त अस्थायी तौर पर 20 से 40 वर्ष तक के लिए होता था। मालगुजारी वसूल करने के लिए गांव का ही कोई विश्वसनीय एवं ईमानदार व्यक्ति चुना जाता था, जिसे लम्बरदार कहा जाता था।

(iii) जमींदारी व्यवस्था –

लॉर्ड कार्नवालिस ने 1793 में स्थायी बंदोबस्त करके भूमि स्वामित्व जमींदारों को सौंप दिया। इस व्यवस्था के अन्तर्गत जमींदार पूरे गांव की जमीनों का लगान वसूल करता था। इसकी प्रमुख कमियाँ यह थीं कि इसके अन्तर्गत कृषक को भूमि पर कम अधिकार प्रदान किए गए, जिससे कृषि कार्यों की उपेक्षा हुई। जमींदारी व्यवस्था की स्थापना से राज्य तथा कृषक

का सीधा सम्बन्ध नहीं रहा। जमींदारों ने अपने प्रभाव से किसानों को कभी संगठित नहीं होने दिया, जिससे उन्हें अपनी आवाज उठाने का अवसर नहीं मिलता था।

भारत में जोत का औसत आकार –

देश में जोत का औसत आकार बहुत छोटा है। यहाँ 68.45 प्रतिशत जोत एक हेक्टेयर से भी छोटे हैं। यहाँ तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या और उत्तराधिकार का प्रचलित कानून ऐसे कारण हैं जो काश्तकारों को अच्छी उपज देने हेतु औसत आकार के मानक खेत भी रखने में बाधक सिद्ध हुए हैं।

भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश और श्रीलंका में उत्तराधिकार नियम के फलस्वरूप खेतों का विभाजन व जोत-विखंडन हो जाता है, और मृतक की कृषि-सम्पत्ति उसके पुरुष उत्तराधिकारियों में बराबर-बराबर विभाजित हो जाती है। प्रत्येक बेटा इस बात पर अड़ा देखा जाता है कि उसे प्रत्येक अलग-अलग स्थित खेत में उसका भाग उसी स्थित खेत में से मिलना चाहिए।

इससे अलग-अलग दूरी में स्थित छोटी जोतों का भी आगे विखंडन होता जाता है। इससे बहुत सी खेती की भूमि व्यर्थ हो जाती है और जोत का आकार भूमि उपयोग की दृष्टि से आर्थिक रूप से लाभकारी नहीं रहता। वह इतना छोटा हो जाता है कि कृषि सुधार के अनुकूल तौर-तरीकों का उसमें प्रयोग संभव नहीं होता है।

जोत-विखंडन से उत्पन्न यह हानि सर्वविदित है। इससे कृषि भूमि का बहुत बड़ा भाग प्रभावी कृषि के अधीन नहीं आ पाता और आर्थिक रूप से हानिप्रद सिद्ध होता है। खेत के छोटे-छोटे टुकड़े आधुनिक मशीनों व ट्रैक्टरों आदि के प्रयोग में भी बाधक होते हैं।

तालिका क्रमांक - 1

भारतः जोतों का आकार एवं वितरण की बदलती प्रवृति

(जोत आकार 000 संख्या, जोत क्षेत्र 000 हेक्टेयर, औसत आकार हेक्टेयर में)

जोत वर्ग	जोतों की संख्या/प्रतिशत		जोत अंतर्गत क्षेत्र/ प्रतिशत		जोतों का औसत आकार	
	2005-06	2015-16	2005-06	2015-16	2005-06	2015-16
सीमांत (Less than 1 hectare)	83694 (64.8)	100251 (68.45)	32026 (20.2)	37923 (24.03)	0.38	0.38
लघु (1.0 to 2.0 hectare0	23930 (18.5)	25809 (17.62)	33101 (20.9)	36151 (22.91)	1.38	1.40
अर्द्ध मध्यम (2.0 to 4.0 hectare)	14127 (10.9)	13993 (9.55)	37898 (23.9)	37619 (23.84)	2.68	2.69
मध्यम (4.0 to 10.0 hectare)	6375 (4.9)	5561 (3.80)	36583 (23.1)	31810 (20.16)	5.74	5.72
बड़ा (10.0 hectare and above)	1096 (0.8)	838 (0.57)	18715 (11.8)	14314 (9.07)	17.08	17.07
कुल जोत	129222 (100.0)	146454 (100.0)	158323 (100.0)	157817 (100.0)	1.23	1.08

Source: Department of Agriculture, Cooperation & Farmers Welfare [Agricultur Census 2015-18 (Phase-I)]

भारत में कृषि विशेषताओं के विश्लेषण में एक महत्वपूर्ण पक्ष है खेतों का छोटे आकारों में बिखरा होना। सन् 2015-16 के आंकड़ों के अनुसार 68.45 प्रतिशत जोत सीमांत जोत (01 हेक्टेयर से कम आकार) के अंतर्गत थी जबकि लघु जोतो (01 से 02 हेक्टेयर) की संख्या 17.62 प्रतिशत थी। इस प्रकार क्रमशः बड़े आकार के जोतो की संख्या कम होती चली गई है। देश में अर्द्ध-मध्यम जोत 9.55 प्रतिशत, मध्यम जोत 3.80 प्रतिशत तथा बड़े जोत 0.57 प्रतिशत थी। इन जोताकारों की संख्या तथा औसत आकारों में समय के साथ निरंतर परिवर्तन हुआ है। इन परिवर्तनों में दो प्रवृत्तियां स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है -

(1) छोटे आकार के जोतो की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है तथा बड़े आकार के जोतो की संख्या घट रही है।
(2) जोतों का आकार निरंतर छोटा हो रहा है।

उक्त परिप्रेक्ष्य में विशेषताएँ निम्नानुसार है -

(1) वृहदाकार जोत - भारत में 1960-61 की अवधि में कुल 489 लाख जोतों में से 4.7 प्रतिशत बड़ी जोत से संबंधित थे। इन जोतों का औसत आकार 17.55 हेक्टेयर था। वर्ष 2015-16 मे वृहदाकार जोतो (10.0 हेक्टेयर से ज्यादा) की संख्या का प्रतिशत मात्र 0.57 था जिसके अंतर्गत देश के कुल कृषि भूमि का 9.07 प्रतिशत भाग था। इस प्रकार इस संवर्ग के अंतर्गत जोत का औसत आकार 17.07 हेक्टेयर है।

(2) मध्यम आकार के जोत - 04 से 10 हेक्टेयर तक के आकार वाले जोत मध्यम आकार के जोत माने जाते है। सन् 1960-61 में मध्यम आकार के जोतों की संख्या 13.4 प्रतिशत, 1980-81 में घटकर 9.1 प्रतिशत 1990-91, में 7.1 प्रतिशत, तथा 2015-16 में घटकर मात्र 3.80 प्रतिशत रह गया है। वर्तमान में इस वर्ग में कुल जोत भूमि का 20.16 प्रतिशत भूमि सम्मिलित है। मध्यम आकार के जोत का औसत आकार 5.72 हेक्टेयर है। इस संवर्ग के जोत का औसत आकार में भी निरंतर गिरावट हो रही है। 1960-61 में 6.15 हेक्टेयर, 1980-81 में 5.98 हेक्टेयर 1990-91 में 5.90 हेक्टेयर थी। मध्यम आकार के जोतों की संख्या एवं औसत आकार निरंतर घट रही है।

(3) अर्द्धमध्यम आकार के जोत - 02 से 04 हेक्टेयर तक के जोत की अर्द्धमध्यम आकार जोत कहा जाता है। 1960-61 में अर्द्ध मध्यम आकार के जोत की संख्या 18.9 प्रतिशत, 1980-81 में 14.00 प्रतिशत 1990-90 में13.10 प्रतिशत तथा 2015-16 में घटकर 9.55 प्रतिशत रह गया है। इस आकार का औसत जोत 1960-61 में 2.86 हेक्टेयर थी, 1990-91 में घटकर 2.76 हेक्टेयर तथा 2015-16 में 2.69 हेक्टेयर रह गया है।

(4) लघु आकार के जोत - 01 हेक्टेयर से 02 हेक्टेयर तक के जोत को लघु जोत कहा जाता है। भारत में 1960-61 लघु जोत के अंतर्गत संख्या 22.3 प्रतिशत, 1990-91 में 18.8 प्रतिशत तथा 2015-16 में मात्र 17.62 प्रतिशत संख्या रह गई है। लघु जोत के अंतर्गत भूमि का औसत आकार वर्तमान में (2015-16) 1.40 हेक्टेयर है।

(5) सीमांत आकार के जोत - इस जोत आकार में भूमि का आकार 01 हेक्टेयर से भी कम होता है। देश में 1960-61 में जहां 40.7 प्रतिशत संख्या थी, इसमें निरंतर बढोत्तरी हो रही है। 1980-81 में यह 56.5 प्रतिशत, 1990-91 में 59.4 प्रतिशत, तथा 2015-16 में बढकर 68.45 प्रतिशत संख्या हो गई है। आंकडों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सीमांत आकार के क्रियात्मक जोतों की संख्या में जहां निरंतर वृद्धि हो रही है, वहीं इसके औसत आकार में निरंतर कमी हो रही है। देश में 1960-61 में यह 0.44 हेक्टेयर थी, 1980-81 में 0.39 हेक्टेयर तथा 2015-16 में थोडा और घटकर 0.38 हेक्टेयर रह गई है।

जोत आकारों का निरंतर छोटा होना हिन्दु एवं मुसलमान दोनों के उत्तराधिकार कानून तथा बढ़ती कृषक जनसंख्या का कारण है। संयुक्त परिवार के विघटन के साथ ही भूमि का विखंडन होता जा रहा है। सभी उत्तराधिकारियों को अच्छी तथा बेकार सभी प्रकार की भूमि में समान हिस्सा मिल सके, इस सिद्धांत के कारण पैतृक जोत संतति तक पहुंचने पर स्थिति और उपजाऊपन के अनुसार अनेक टुकड़ों में विभक्त हो जाती है। इस विभाजन के मूल में उचित हिस्सा तथा आर्थिक न्याय के भी सिद्धांत है। विभाजन के समय यह भी ध्यान रखा जाता है कि खरीफ, रबी, ऊँची-नीची भूमि में समान हिस्सा हो, जिससे विभिन्न प्रकार की मिट्टियों पर कई फसलें उत्पन्न की जा सकने की क्षमता हो। इस प्रकार विखंडित तथा बिखरे खेतों पर आधुनिक विकसित उपकरण तथा विधियों का प्रयोग भी संभव नहीं हो पाता है।

कृषि विकास पर जोत आकारों का प्रभाव

भारत में 86.07 प्रतिशत किसान छोटे और सीमांत है, जिन्हें अक्सर एक हेक्टेयर से भी कम अथवा महज एक से लेकर दो हेक्टेयर तक की कृषि जोत पर ही अपना पसीना बहाने पर विवश होना पड़ता है। भारत में ग्रामीण परिवार का अधिकांश हिस्सा कृषि क्षेत्र के भरोसे ही अपना जीवन यापन कर रहा है। इनमें से 69 प्रतिशत से भी अधिक परिवारों के पास या तो मामूली कृषि जोत है या उन्हीं पर अपना सारा पसीना बहाकर इन परिवारों को किसी तरह अपना जीवन गुजर-बसर करना पड़ता है। वहीं दूसरी ओर 17.1 प्रतिशत परिवारों को छोटी कृषि जोत के भरोसे ही अपना काम चलाना पड़ रहा है। भारत के लगभग 72.3 प्रतिशत ग्रामीण परिवार कृषि क्षेत्र में या तो किसान या कृषि मजदूरों के रूप में काम करते हैं। वर्ष

2011 की जनगणना से यह निष्कर्ष उभर कर सामने आया है। हालांकि कृषि क्षेत्र में कार्यरत किसानों का अनुपात वर्ष 1951 के 71.9 प्रतिशत से घटकर वर्ष 2011 में 45.1 प्रतिशत के स्तर पर आ गया। जहां तक कम उत्पादकता का सवाल है, यह प्रतिकूल मौसम सहित विभिन्न कारकों का परिणाम है। कृषि क्षेत्र में विकास के अभाव ने ग्रामीण आबादी को गैर-कृषि की ओर अग्रसर होने पर विवश कर दिया है। जिसके परिणामस्वरूप वर्ष 1999-2000 और वर्ष 2011-12 के बीच गैर-कृषि ग्रामीण रोजगार लगभग 12 प्रतिशत बढ़ गया।

किसी तरह जीवन यापन करने वाले ज्यादातर किसानों के खाद्य उत्पादन के कार्य में ही लगे होने के बावजूद उनके रहन-सहन में सुधार के लिए सरकार द्वारा कोई खास कार्य अब तक नहीं किया गया है। वर्ष 2003 में सरकार द्वारा किए गए किसानों के सर्वेक्षण के अनुसार, हर दस किसानों में से चार किसान खेती को नापसंद करते हैं और यदि उन्हें कोई विकल्प दे दिया जाए तो वे इसे छोड़कर किसी और पेशे को अपनाना पसंद करेंगे। इनमें से 27 प्रतिशत किसानों का यह मानना था कि खेती लाभदायक नहीं है और आठ प्रतिशत किसानों का यह मानना था कि यह जोखिम भरा है। ये निष्कर्ष बेशक अनपेक्षित हो सकते है, लेकिन इससे यह तो अवश्य ही पता चल जाता है कि देश के किसानों के बीच किस हद तक असंतोष फैला हुआ है। इस असंतोष के जो भी असली कारण है उनका तत्काल निराकरण करने की जरूरत है।

छोट जोत आकारों वाले किसानों की समस्याएँ -

भारत में छोटे किसानों को तकनीकी वित्तीय और संस्थागत सहायता हासिल करने के मार्ग में विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं में निम्नलिखित मुख्य है -

वैसे तो छोटे और बड़े दोनों ही किसानों को इनमें ज्यादातर चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, लेकिन कृषि से जुड़े कच्चे माल तक पहुंच के मामले में दोनों की स्थितियां अक्सर एक जैसी नहीं होती है। इस मामले में बड़े किसानों को कुछ बढ़त हासिल है। उदाहरण के लिए छोटे किसानों की तुलना बड़े किसान सिंचाई के सार्वजनिक (नहर) और निजी (ट्यूबवेल) स्रोतों तक अपनी पहुंच आसानी से सुनिश्चित कर लेते हैं वहीं छोटे किसान अक्सर भूजल पर निर्भर रहते हैं जो बहुत सीमित है। आवश्यक जानकारी एवं कच्चे माल की प्राप्ति में यह असमानता छोटे एवं सीमांत किसानों को उत्पादकता से जुड़े जोखिमों के मामले में और ज्यादा असुरक्षित बना देती है।

(1) उपज बेचने के लिए बाजार- बाजारों तक छोटे किसानों की पहुंच बढ़ाने के लिए सरकार ने हाल ही में एक नया कार्यक्रम ''ई-नाम'' शुरू किया है। यह कृषि जिन्सों में कारोबार के लिए एक वर्चुअल साझा बाजार है, जिससे खरीदारों एवं विक्रेताओं के बीच सूचना संबंधी विषमता समाप्त हो जाने की उम्मीद है। अतः इससे समूची कारोबारी प्रक्रिया और अधिक पारदर्शी बन जाएगी। इस तरह की प्रणालियों की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि किसानों की शिक्षा का स्तर क्या है और खरीदारों के साथ बातचीत के वैकल्पिक तरीकों को जानने के मामले में किस हद तक खुलापन है। असंगठित क्षेत्र के उद्यमों के लिए राष्ट्रीय आयोग की एक रिपोर्ट से पता चला है कि छोटे एवं सीमांत किसानों के बीच साक्षरता दर क्रमशः 55 प्रतिशत और 48 प्रतिशत है, जो 72.98 प्रतिशत की राष्ट्रीय औसत साक्षरता दर से कम है। इसी तरह ग्रामीण क्षेत्रों में 67.6 प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों में 84.1 प्रतिशत साक्षरता है। अतः ऐसे में ग्रामीण आबादी को कृषि क्षेत्र में सरकार की डिजिटल पहलों से लाभ उठाने में बेहद मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा।

(2) पानी, उर्वरकों, कीटनाशकों, बीजों और अन्य सामग्री तक पहुंच - भारत में पानी की कम उपलब्धता वाले क्षेत्रों, जिनमें महाराष्ट्र, पंजाब, हरियाणा व कर्नाटक शामिल है, में जल तक पहुंच सुनिश्चित करना एक बड़ी समस्या है। 10 हेक्टेयर और उससे ज्यादा बड़े भूखंडों वाले किसान जिनकी पहुंच आधुनिक मशीनों और पंपों तक होती है, बड़ी मात्रा में पानी की खपत करते है। ऐसे में छोटे किसानों को बेहद कम पानी मिल पाता है क्योंकि वे इस तरह के पंप लगाने में असमर्थ होते है। इस स्थिति में फसलें उगाने के लिए उन्हें काफी हद तक बारिश पर ही भरोसा करना पड़ता है अथवा निकटवर्ती ट्यूबवेल से पानी खरीदने पर विवश होना पड़ता है।

इसी तरह उर्वरकों और कीटनाशकों के मामले में सीमित आपूर्ति के कारण इनकी लगातार बढ़ती कीमतों की वजह से बुनियादी कच्चे माल तक छोटे किसानों की पहुंच संभव नहीं हो पाती है। उदाहरण के लिए पिछले वर्षों से असम के माजुली

जिले के किसानों को कीट नियंत्रण की एक वैकल्पिक विधि विकसित करनी पड़ी है, जिसके तहत झींगुर को खाना पड़ता है क्योंकि वे क्षेत्र में उगाई जाने वाली फसलों पर हमला कर देते हैं।

(3) भारत में बीजों की ज्यादा पैदावार वाली किस्मों की सीमित उपलब्धता- नए कीट प्रतिरोधी और उच्च गुणवत्ता वाले बीजों के विकास के लिए अपर्याप्त शोध होने की वजह से ही इस तरह की स्थिति देखने को मिल रही है, इस वजह से अक्सर कृषि उत्पादकता बुरी तरह प्रभावित होती है। इसके अलावा, संकर बीज किस्मों की लागत छोटे किसानों के लिए हद से ज्यादा होती है।

(4) ऋण और बीमा की सुविधाओं तक पहुंच - छोटे एवं सीमांत किसानों द्वारा ज्यादा उत्पादन करने के बावजूद उनकी अर्जित आमदनी कम रहने और औपचारिक ऋण संस्थानों में जटिल परिचालन प्रक्रियाएं अपनाये जाने के कारण इन किसानों को अपनी निवेश एवं खपत जरूरतों के वित्तपोषण के लिए ऋण के अनौपचारिक तरीकों के भरोसे रहने पर विवश होना पड़ता है। वर्ष 2012 में यह पाया गया कि लगभग 85 प्रतिशत सीमांत किसान गैर-संस्थागत ऋण बाजारों जैसे कि गांव के जमींदारों, व्यापारियों, दोस्तों और अन्य लोगों पर निर्भर थे, जो औपचारिक ऋण बाजार दर का 100 गुना वसूला करते थे। वर्ष 2011-12 में भारत में छोटे और सीमांत किसानों के बीच लगभग 82 फीसदी ऋणग्रस्तता थी। किसानों के बीच व्यापक निराशा का संभवतः सबसे गंभीर कारण था और यहां तक कि इसी वजह से विभिन्न राज्यों में किसान आत्महत्या करने पर विवश हो गए।

सरकार ने किसानों को आसान और अधिक विश्वसनीय ऋण सुविधा मुहैया कराने के उद्देश्य से कृषि यंत्रीकरण योजना और मूल्य समर्थन योजना जैसी अनेक योजनाएं शुरू की है। हालांकि यह माना जाता है कि इन कार्यक्रमों से अक्सर बड़े जमीदार ही लाभ उठाने में कामयाब हो जाते है, जबकि छोटे और सीमांत किसानों के लिए संकट का दौर बदस्तूर जारी ही रहता है। इसके अलावा कृषि यंत्रीकरण योजना के तहत ब्याज में छूट के तौर पर मिलने वाली सब्सिडी की आलोचना इस बात को लेकर होती रही है कि इससे किसानों को संबंधित धनराशि को कृषि के बजाय ज्यादा मुनाफे वाले विकल्पों में लगाने का मौका मिल जाता है। इस योजना का दुरुपयोग बड़े किसानों द्वारा किया जाता रहा है, जो औपचारिक ऋण व्यवस्थाओं के दायरे से बाहर रहने वाले छोटे किसानों को ऊँची ब्याज दरों पर पैसा उधार दे देते है।

इसी तरह फसल बीमा योजना एक ऐसा कार्यक्रम है जिससे आधे से भी अधिक किसान परिवार अनजान है। 24 फीसदी किसान परिवारों की पहुंच इस सुविधा तक नहीं थी। इस सुविधा तक कोई भी पहुंच न रखने वाले परिवारों की सर्वाधिक संख्या जिन-जिन राज्यों में थी उनमें जम्मू-कश्मीर (72 प्रतिशत), पंजाब (67 प्रतिशत), हरियाणा (42 प्रतिशत), बिहार (49 प्रतिशत), और राजस्थान (37 प्रतिशत), जैसे राज्य है।

(5) फसल विविधीकरण के लिए सीमित गुंजाइश- भारत में छोटे और सीमांत किसान दो हेक्टेयर से भी कम की कृषि जोत के मालिक होते हैं उस पर खेती करते है, जो अक्सर टुकड़ों में होती हैं और इनमें से केवल कुछ को ही पर्याप्त सिंचाई सुविधाएं सुलभ होती है। इन छोटी-छोटी जोतों के लगातार सिकुड़ते औसत आकार के कारण फसल विविधीकरण के लिए गुंजाइश बेहद सीमित हो गई है। इसके अलावा, सरकार की पहल मुख्य रूप से चावल और गेहूं के उत्पादन पर ही ध्यान केंद्रित करती है। चावल, गेहूं, मोटे अनाज और कुछ दालों के उत्पादन के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य के प्रावधान के कारण उपज के लिए दी जाने वाली मूल्य की गारंटी भी इसमें शामिल है। ये पहल केवल कुछ राज्यों तक की सीमित है। इस वजह से किसान विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसान वाणिज्यिक फसलों का उत्पादन शुरू करने को लेकर हतोत्साहित हो जाते है। ऐसे में किसान जोखिम उठाने से और ज्यादा बचना शुरू कर देते है जिससे भविष्य में फसल विविधीकरण के लिए प्रयास करने की संभावना कम हो जाती है। विशेष रूप से ऐसे राज्यों में फसल विविधीकरण से काफी लाभ होने की संभावना है जो खराब मिट्टी की समस्याओं से जूझ रहे हैं अथवा जहां पानी की उपलब्धता अपेक्षाकृत कम है। उदाहरण के लिए पांच एकड़ जमीन पर अनाज लगाने से जितनी आमदनी होगी उससे भी कहीं ज्यादा आय महज एक एकड़ भूमि पर उच्च मूल्य वाली फसलें लगाने से अर्जित की जा सकती है। अतः ऐसे कृषकों को प्रशिक्षित करने के लिए कारगर शासकीय व्यवस्था बनाने की जरूरत है, जो फसल विविधीकरण के संभावित लाभों को ध्यान में रखते हुए किसानों का खाद्यान्न के साथ-साथ वाणिज्यिक

फसलों का भी उत्पादन शुरू करने के लिए प्रोत्साहित करें। विशेष रूप से ऐसे राज्यों में फसल विविधीकरण से काफी लाभ होने की संभावना है जो खराब मिट्टी की समस्याओं से जूझ रहे हैं अथवा जहां पानी की उपलब्धता अपेक्षाकृत कम है।

(6) फसल कटाई के बाद जरूरी समझे जाने वाले बुनियादी ढांचे का अभाव - किसानों को अपनी उपज के लिए पर्याप्त भंडारण और माल गोदाम संबंधी सुविधाएं न मिल पाने के कारण उन्हें अक्सर भारी नुकसान उठाना पड़ता है। इस वजह से वे अक्सर औने-पौने दामों पर अपनी उपज बेचने पर विवश हो जाते है। यह समस्या पूरे देश में देखी जा रही है जिससे सभी कृषि उत्पाद प्रभावित होते है। उदाहरण के लिए, वर्ष 2016 के आरंभ में ओडिशा में आलू किसानों को भारी नुकसान उठाना पड़ा था क्योंकि शीत भंडारण सुविधाओं के अभाव में उनकी लगभग 20 प्रतिशत उपज बर्बाद हो गई थी। इसी तरह महाराष्ट्र में प्याज किसानों को भारी नुकसान का सामना करना पड़ा था क्योंकि कृषि उपज मंडी समिति में 35 दिनों तक चली हड़ताल के कारण वे अपने घरों में ही अपनी उपज का भंडारण करने पर विवश हो गए थे जिसके परिणामस्वरूप बड़ी मात्रा में उनका माल बर्बाद हो गया था। इस दिशा में अभी भी बहुत कुछ करने की जरूरत है। हर राज्य में भंडारण की सुविधाओं को उस राज्य के वार्षिक कृषि उत्पादन के अनुरूप होना चाहिए। इसके अलावा ये सुविधाएं सभी किसानों, विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों के लिए किफायती होनी चाहिए।

(7) किसानों के लिए सीमित क्षमता निर्माण कार्यक्रम/विस्तार सेवाएँ - छोटे एवं सीमांत किसानों की तकनीकी सलाहकारों और आधुनिक प्रौद्योगिकी तक पहुंच बड़ी ही सीमित होती है, जबकि सच्चाई यही है कि विभिन्न कृषि गतिविधियों के उत्पादन और उत्पादकता में बेहतरी के लिए इसे अत्यंत आवश्यक माना जाता है। भारत में सार्वजनिक क्षेत्र की विस्तार सेवाएं विभिन्न युक्तियों जैसे कि प्रशिक्षण एवं दौरा प्रणाली, कृषि विज्ञान केन्द्रों (केवीके) और विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के लिए शुरू की गई कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एजेंसी के जरिए प्रदान की जाती है। वर्तमान में देश भर में कुल मिलाकर 721 (2020) कृषि विज्ञान केंद्र है।

इसके साथ-साथ औपचारिक ऋण एवं बीमा तक सीमित पहुंच, आधुनिक कृषि उपकरणों एवं तौर-तरीकों का समुचित प्रशिक्षण देने वाले क्षमता निर्माण कार्यक्रमों का अभाव, सिंचाई के लिए अपर्याप्त पानी की आपूर्ति, फसल विविधीकरण के लिए बेहद कम या कोई गुंजाइश नहीं तथा विपणन सुविधाओं का अभाव प्रमुख है।

भारत में सार्वजनिक और निजी एजेंसियां अपने यहां सीमित श्रमशक्ति होने की वजह से कृषि क्षेत्र में इन सेवाओं की सार्वभौमिक पहुंच सुनिश्चित करने में नाकाम रही है। उदाहरण के लिए वर्ष 2005 में भारत में केवल 40 फीसदी किसान परिवारों की ही पहुंच किसी भी उपलब्ध स्रोतों से प्राप्त कृषि संबंधी सूचनाओं तक थी। एक अध्ययन में कृषि जोत के आकार के लिहाज से सूचनाओं की अनुपलब्धता 53.6 फीसदी बड़े किसानों की तुलना में केवल 38.2 फीसदी छोटे किसानों की ही पहुंच संबंधित सूचनाओं तक थी। छोटे किसानों के लिए संबंधित सूचनाओं के स्रोत निम्न थे - (1) अन्य प्रगतिशील किसान (16 प्रतिशत), (2) कच्चे माल के डीलर (12.6 प्रतिशत), (3) रेडियो (12.4 प्रतिशत), (4) टेलीविजन (7.7 प्रतिशत), (5) समाचार पत्र (6 प्रतिशत), (6) विस्तार कार्यकर्ता (4.8 प्रतिशत)।

भारत में भू-स्वामित्व की संरचना और जोत आकार कृषि विकास के महत्वपूर्ण निर्धारक हैं। छोटे और सीमांत जोतों की अधिकता, भूमि का विखंडन तथा असमान वितरण कृषि उत्पादन और तकनीकी विकास में बाधा उत्पन्न करते हैं। यदि भूमि सुधार, जोत समेकन, सहकारी खेती तथा आधुनिक कृषि तकनीकों को प्रभावी रूप से लागू किया जाए, तो कृषि उत्पादन में वृद्धि संभव है। इसके साथ-साथ किसानों को वित्तीय सहायता, प्रशिक्षण और बाजार सुविधाएँ उपलब्ध कराना भी आवश्यक है। इस प्रकार समग्र दृष्टिकोण अपनाकर भारत में कृषि विकास को नई दिशा दी जा सकती है।

References-

1. Govt. Of India (2019-20) Annual Report, Ministry Of Statistics and Programme Implementation
2. Govt. Of India (2019) Agricultural Statistics- AT A GLANCE, Ministry Of Agriculture and Farmer Welfare, Deptt. Of Agriculture.
3. Govt. Of India (2019) Pocket Book of Agricultural Statistics, Ministry Of Agriculture and Farmer Welfare, Directorate Of Economics and Statistics.

4. Kumar, Pramila and Shrikamal Sharma (1990) Krishi Bhoogol, Madhya Pradesh Hindi Granth Academy, Bhopal.
5. Krishan, Gopal (1992) The Concept Of Agricultural Development, Edited by Noor Mohammad, Concept Publishing House, No. 04, Vol. 07, pp. 29-36
6. Sinha, Anil Kumar (2020) Bharat Me Jal Sansadhan – Vikas evam Niyojan, Blue Rose Publishers, New Delhi.
7. Sinha, Anil Kumar (2008-09) Problem Of Low Agricultural Productivity in Tribal Areas, with Special Reference to Surguja District, UGC, MRP.
8. Sinha, Anil Kumar (2021) Agricultural Development in India (in Hindi), Asian Press Books, Kolkata, pp. 88-106
9. भारत सरकार (2019-20) वार्षिक रिपोर्ट, कृषि सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग, नई दिल्ली।
10. भारत सरकार (2015-16) भारतीय कृषि की स्थिति, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय, नई दिल्ली।
11. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (2011-12) वार्षिक रिपोर्ट, कृषि अर्थशास्त्र, विपणन एवं सांख्यिकी, नई दिल्ली, पृष्ठ 77-83।
12. शेखर सी. एम. (2014) भारतीय कृषि- नीति एवं निष्पादन की समीक्षा, योजना, वर्ष-58, अंक-जून, पृष्ठ 27-32।
13. सक्सेना, जगदीश (2020) कृषि: अर्थव्यवस्था की तारनहार, योजना, अंक-नवंबर, पृष्ठ 36-40।
14. सक्सेना, जगदीश (2021) भारतीय कृषि में नवाचार, कुरुक्षेत्र, वर्ष 67, अंक-07, मई, पृष्ठ 10-15।

❑❑❑